शारदा

त्रैमासिक भित्ति पत्रिका

वर्ष 2024, अंक- 6

(जुलाई-सितंबर)

संरक्षक

प्रो. संजीव जैन

माननीय कुलपति

जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय

परामर्शदाता

प्रो.भारतभूषण (विभागाध्यक्ष)

हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

संपादक

डालेश शर्मा (शोधार्थी) शिवम (शोधार्थी)

प्रधान संपादक

डॉ. शशिकांत मिश्र

हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

❖ *पत्रिका में प्रस्तुत रचनाओं एवं आगामी अंक हेतु सुझाव के लिए संपर्क सूत्र : दूरभाष – 9030963026 (डॉ. शशिकांत मिश्र)*

विश्वविद्यालय वेबसाइट : *https://www.cujammu.ac.in/* विभागीय मेल : *office.hnd@cujammu.ac.in*

शारदीय नवरात्रि और नवपल्लवित कवियों की कल्पना...

शारदीय नवरात्रि, सनातन हिन्दू धर्म के उन महत्वपूर्ण पर्वों में से एक हैं, जिसमें शक्ति स्वरूपा जगत जननी माँ जगदंबा की उपासना की जाती है। शरद ऋतु में आने के कारण इस पर्व को शारदीय नवरात्रि कहा जाता है तथा इन नौ दिनों में माँ दुर्गा के नौ रूपों की उपासना जाती है, जिससे मानव समाज को आत्मिक और आध्यात्मिक बल मिलता है। शक्ति-तत्व एवं शक्ति-उपासना सम्बन्धी सर्वोत्कृष्ट प्रामाणिक ग्रन्थ आगम-शास्त्र के अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति से पूर्व भी देवी थी जो अकेली ही प्रकट हुई थी। 'देवी ह्येकाग्रे आसीत्' तब कहीं कुछ भी नहीं था। अतः देवी को केवल अपनी ही छाया दिखाई दी। इसी स्वबिम्ब (छाया) से माया बनी जिससे मानसिक शिव हुए। इसी आधार पर आगम शास्त्रों में शक्ति (देवी) को शिव की जननी भी माना गया है। देवीभागवत के अनुसार भगवती अपने पिता नगाधिराज हिमालय को अपने प्राकट्य का विवरण देते हुए कहती हैं कि 'हे नगाधिराज हिमालय! सृष्टि से पूर्व मेरे अलावा कहीं कोई भी नहीं था। तब मैं ही परब्रह्म थी। अपने ही आधार (बिम्ब) शिव का वरण करके मुझमें दोष आ गया और मैं 'एकोहं बहुस्याम' की कामना करके सृष्टि रचना में निमग्न हो गई। इसी शक्ति स्वरूपा माँ जगदम्बा तथा माँ शारदा की कृपा से कई साहित्यिक विभूतियों का जन्म संभव हो सका है।

माँ शारदा की वीणा से निकले स्वर के श्रवण से कई मूक भी वाचाल बन गये हैं तथा उनके हृदय सागर से कई कविताओं की धारा बह गई है। इन उद्भासित व्यक्तित्व की सर्जनात्मक दृष्टि ने जहाँ एक ओर राष्ट्र को दिशा दी है, वहीं दूसरी ओर माँ भारती के मस्तक को ऊँचा उठाते हुए उनकी भाल पर विजय की टीका पहना दी है। इन महान रचनाकारों से प्रेरित हमारे जम्मू-केंद्रीय विश्वविद्यालय के सद्य प्रस्फुटित कवियों ने विश्वविद्यालय द्वारा निरंतर प्रकाशित भित्ति पत्रिका 'शारदा' को नवकलेवर प्रदान किया है। इन नव पल्लवित कवियों को भित्ति पत्रिका 'शारदा' के माध्यम से एक मंच प्रदान करने के लिए विश्वविद्यालय के माननीय कुलपति तथा पत्रिका के संरक्षक प्रो. संजीव जैन जी का दिग्दर्शन हमें हमेशा मिलता रहा है। इन महान सर्जकों को निरंतर नयी-नयी रचनाएँ सृजित करने हेतु प्रेरणा प्रदान करने में हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग के प्रमुख प्रो. भारत भूषण जी का योगदान भी श्लाघनीय है।

'शारदा' भित्ति पत्रिका के इस जुलाई-सितंबर, 2024 अंक के लिए अपनी रचनाएँ प्रदान कर पत्रिका को सुंदर कलेवर प्रदान करने वाले पत्रिका के संपादकों शोधार्थी डालेश शर्मा और शिवम को विशेष बधाई। जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय के इन प्रतिभाओं की लेखनी से निकली श्रेष्ठ रचनाएँ पाठकों के लिए प्रस्तुत हैं...

प्रधान संपादक
डॉ. शशिकांत मिश्र

दुःख धरा के

मैं कैसे भूल जाऊँ दुःख धरा के,

उसके भीतर के ऊहापोह,

हो रही वेदना देख बिछोह

कहाँ गईं वो मंजरियों की डालियाँ ?

जो झूमती थीं आंगन-आंगन

कानन भी खिल उठता था देख हिलोर

पक्षियों का चहचहाना

जग को निद्रा से जगाना

बुनता था जीवन का ताना-बाना

हो उठते थे मानव विभोर

आंगन देख खिल उठता था आनन

न दिखता था आकाश का ओर-छोर

उड़ जाऊँ आकाश की ओर

एक उड़ान मैं भी भर आऊँ

देखूँ गए पक्षी किस ओर ?

वेदना को कैसे छिपाऊँ ?

देखूँ मैं किस मुख की ओर ?

मानव ने सब सुख के लिए किया,

लेकिन क्या देख न पाया भविष्य में आती

यह थोड़ ?

लेकिन अभी भी तो समय है

जाग जाए मानव जाति

बिखेर दे ज्ञान का प्रकाश चहुँ ओर

सब संग हो लें यदि

तो आने वाली पीढ़ियों की झोली भर जाएगी

तभी मानवता जी पाएगी

आओ मिलकर हाथ बढ़ाओ

हाथ बढ़ाकर एक हो जाओ

चलूँ एकता को ले मंज़िल की ओर

संजो लूँ प्रकृति को चहुँ ओर

फिर से हो जाए मानव विभोर

डॉ. वन्दना शर्मा
सहायक आचार्य
हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग
जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय

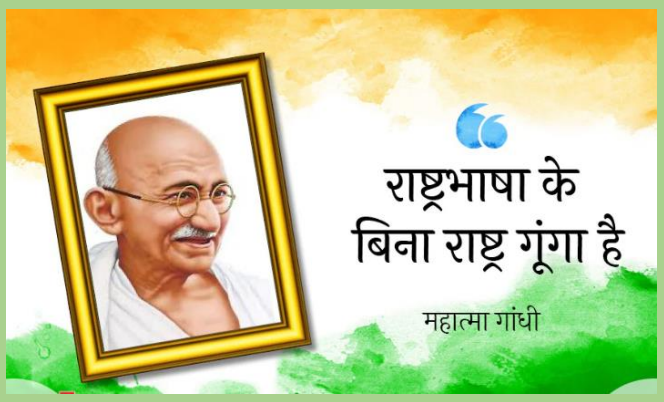

स्मृतियों में

मेरी स्मृतियों में जैसे

हथेलियों पर मेरे,

एक नाम रखा है....!

हर बीती बात

अतीत में एक नाम है, और

सब कुछ निहारता है कोई, अब भी

बीते कल की ओट से..!

हर झरोखे का वहाँ

अपना कुछेक नाम है..!

बचपन के आंगन में एक नीम है..

और जवानी उन बागीचों में

गुजरी है जहाँ,

पेड़ों से आती थी महुए की गंध,

और साखों पर वहां कच्चे आम लगे थे,

पलकों पर ख़्वाब सजाए-

हमने भी घर के ताखों पर कुछ दिये जलाए थे.!

न जाने हम क्या ढूंढ़ने

घर से निकले थे..?

क्यूं किस्मत तुमसे मिला देती है..?

और हमारी कभी न खत्म होने वाली यात्रा,

तुमसे शुरू हो जाती है..!

थोड़े श्रृंगार से तुम्हारी सादगी

दीये की रौशनी में सोने से चमक उठती थी

और ख्वाहिशों के बादल,

मेरे मन के आसमान में झूम उठते थे..!

धीमी रोशनी का जादू खुद को,

तुम्हारे चेहरे की खूबसूरती में ढक लेता था..!

और काजल से तुम्हारे

रात और गहरा,

गहरा होता जाता था..!

प्रेम ना श्वेत है

ना श्याम,

अनंत है,

बस अनंत ही गढ़ता जाता था..!

सुमन कुमार

शोधार्थी (अंग्रेजी-विभाग)

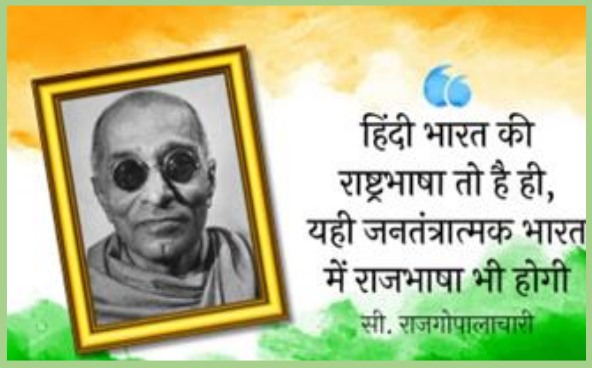

मैं अड़ी हूँ

हाँ, मैं अड़ी हूँ, पीछे पड़ी हूँ।

तभी तो लाखों के पीछे खड़ी हूँ।

ऐसा कब कहा कि कौशलों से भारी हूँ

तभी तो लाखों के पीछे खड़ी हूँ।

जीवन की निराशाओं से भारी हूँ।

लोगों के तंज के सहारे खड़ी हूँ।

तभी तो लाखों के पीछे खड़ी हूँ।

अपनी ही मानसिक दुविधा से भरी हूँ।

माता-पिता की आशा भरी नजरों से घिरी हूँ।

अपने जीवन के संघर्षों से लड़ रही हूँ।

तभी तो लाखों के पीछे खड़ी हूँ।

फिर भी हाँ, मैं अड़ी हूँ, पीछे पड़ी हूँ।

श्वेता कुमारी
बी.ए. बीएड
सातवाँ सत्र

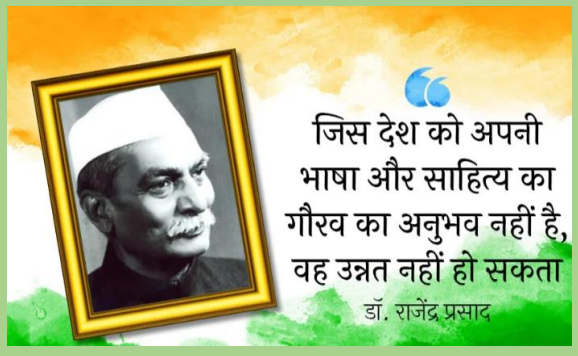

तब कविता बोलती है...

जब मौन एक व्यक्ति होता है,
तब कविता बोलती है!
जब अहंकार मरता है,
तब कविता बोलती है!
जब एक व्यक्ति नैतिकता को अपनाता है,
तब कविता बोलती है!
जब हृदय का सारा कपट मिटता है
तब कविता बोलती है!

जब हृदय और बुद्धि विकसित होकर,
संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदना में–
एकीकरण हो जाता है,
तब कविता बोलती है...!
जब एक भूखे पेट में अन्न का दाना जाता है,
तब कविता बोलती है!
जब एक सृजनात्मक शक्ति
अनुभव से फैंटेसी और फैंटेसी से अभिव्यक्त कर
रचना प्रक्रिया को संपूर्ण कर पाती है,
तब कविता बोलती है!

जब कविता किसी एक की न होकर,
समस्त चराचर के हृदय में संवेदना जगाती है,
तब कविता बोलती है!
तब कविता बोलती है!

अंशु कुमारी
शोधार्थी (हिंदी-विभाग)

आईना

बहुत बार,
बहुत कुछ ऐसा कह देता है आईना....!!
ऐसा कह देता है आईना,
जो किसी ने सुना नहीं,
जो किसी ने महसूस किया नहीं,
जो किसी ने समझा नहीं,
जो किसी ने देखकर भी देखा नहीं!
उसे भी प्रतिबिंबित कर देता है आईना।

एक कवि के साथ-साथ
आलोचक भी होता है आईना?
जी हाँ.
अनुभव करता है अगर
तो उस अनुभव को...
अभिव्यक्त भी करता है आईना !!
व्यष्टि से लेकर समष्टि की...
उड़ान भी भरता है आईना !!
अगर गुण का गुणगान करता है
तो अवगुण का तिरस्कार भी....
करता है आईना !!
वास्तव में
बहुत बार,
बहुत कुछ ऐसा कह देता है आईना....!!
मरता है अगर तो
किसी मरते को जीवन भी...
देता है आईना!

कितने ही तुम,
सभ्यता के आवरण ओढ़ लो....!
तुम में छिपे तुम्हारे सच को,
सामने ला ही देता है...!
तुम्हारी पहचान कर ही लेता है...
आईना !

बहुत बार,
बहुत कुछ ऐसा कह देता है आईना....!!
कहो?
किस-किस के साथ...
होता नहीं है आईना!
राजा हो, चाहे हो रंक कोई,
हर किसी का बराबर...
होता है आईना!!
जन्म से मृत्यु तक साथ...
होता है आईना,
बहुत बार,
बहुत कुछ ऐसा कह देता है आईना...!
बहुत बार,
बहुत कुछ ऐसा कह देता है आईना...!

अंशु कुमारी
शोधार्थी (हिंदी-विभाग)

टूटते परिवार और बिखरता समाज

आज की सबसे दुःखद खबर टूटती पारिवारिक संस्था ही हो सकती है। पहले के समय में रिश्तों को बोझ नहीं समझा जाता था, परंतु बदलते दौर और समय ने इस सारी व्यवस्था को बदल कर रख दिया है। आज परिवार टूटते जा रहे हैं और स्व-केंद्रित होते जा रहे हैं। परिवार समाज की प्राथमिक इकाई है। परिवार से ही समाज का निर्माण होता है और समाज की अविच्छिन्न कड़ियों से ही देश अस्तित्व में आता है। परिवार से समाज का निर्माण व्यक्ति करता है। व्यक्ति ही मूल्यों का वाहक होता है। जब कुछ व्यक्ति एक समूह में रहते हुए जीवन को सुगम रूप से गतिमान रखने के लिए कुछ नियमों का निर्माण करते हैं, जिनका पालन समाज के हर व्यक्ति को करना अनिवार्य होता है तो वे ही नियम जीवन मूल्य का स्वरूप ग्रहण करते हुए सामाजिक ताने-बाने को एकजुट रखते हैं। समाज का कोई सदस्य जब इन नियमों का पालन नहीं करता है तो उसे विद्रोही कहते हुए उस पर दण्डात्मक कार्यवाही की जाती है। उसे समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है या उसे उसके समाज-विरोधी कृत्यों या आचरण के कारण आर्थिक जुर्माने के माध्यम से दंडित किया जाता है या उसपर समाज के पारंपरिक नियमों के आधार पर दण्ड का प्रावधान किया जाता है। इसके पीछे की सोच समाज के नैतिक पारिवारिक सामाजिक मूल्यों को क्षरण होने से रोकना ही प्रमुखतया हुआ करती है।

लेकिन यह उस समाज में ही संभव है जिसमें परिवार सुरक्षित हैं और जिसके सदस्य समाज के नियमों का पालन करने के लिए कटिबद्ध हों। यदि समाज का ताना-बाना छिन्न-भिन्न हो चुका है, उसके सदस्य ही उसके नियमों के प्रति उदासीन हों तो सामाजिक मूल्यों का विनाश होना तय है जो समाज और परिवार दोनों के लिए निश्चित ही कालान्तर में घातक सिद्ध होने हैं । सामाजिक मूल्यों का क्षरण सबसे पहले परिवार नाम की संस्था को ही लील जाती है। परिवार के बिखराव से समाज और तत्पश्चात देश का विखंडन होना सुनिश्चित हो जाता है। हर व्यक्ति स्वच्छंदता के नाम पर बेलगाम हो जाता है। उसे किसी सामाजिक मर्यादा का भान नहीं रहता है। वह सामाजिक नियमों को दकियानूसी और व्यर्थ का

मानते हुए मनमानीपूर्ण जीवन बिना नतीजे के परवाह के जीने लगता है। उसे देखकर अन्य लोग भी उसके सदृश जीवन शैली का अंधानुकरण करने लगते हैं। परिणामस्वरूप समाज में सामाजिक मूल्यों को दरकिनार करके जीवन जीने की होड़ सी लग जाती है।

भारतीय समाज में सामाजिक मूल्यों और तदनुरूप आचरण नहीं करने की प्रवृत्ति का जो चलन हो चला है वह एक नये संकट की ओर ही संकेत कर रहा है। आजकल की पीढ़ी उन मूल्यों को अपने लिए मुफीद नहीं मानती जिनसे उनके पूर्वज संचालित होकर स्थिर एवं खुशहाल जीवन व्यतीत करते थे। इस संदर्भ में शादी को लिया जा सकता था। आधुनिकता के नाम पर बिना माता पिता की अनुमति की शादियां पारिवारिक संस्था को तहस-नहस करने लगी हैं। शादी के पश्चात बहू का पारिवारिक सम्पत्ति में अपना हिस्सा मांगकर न्यायालय का दरवाज़ा खटखटाना उसके द्वारा ससुराल पक्ष के विरुद्ध अमर्यादित, झूठी प्रताड़ना की प्राथमिकी दर्ज करवाकर 'ब्लैकमेलिंग' करना परिवारों की स्थिति के लिए ख़तरनाक होती जा रही हैं। इसी तरह बच्चों द्वारा माता-पिता की आज्ञा का उल्लंघन करना, शादी के बाद उन्हें घर से बेदखल करके वृद्धाश्रम में भेजने के लिए षड्यंत्र करना या उनकी हत्या तक कर देना सामाजिक और पारिवारिक संस्था तथा मूल्यों की दरकन का ही नतीजा है। ऐसी घटनाएं हर शहर हर गांव में आम होती जा रही हैं। अखबार के पृष्ठ इस तरह की खबरों से कभी खाली नहीं जाते हैं। ऐसी खबरें हृदयविदारक और चेतना को झकझोर देने वाली होती हैं।

इस तरह की घटनाओं के पीछे व्यक्ति को कानून द्वारा दी गई सुरक्षा और स्वतंत्रता ही जिम्मेदार है इसमें कोई शक नहीं है। जिस समाज में बुजुर्गों की उपेक्षा की जाएगी, उन्हें बोझ समझकर ठिकाने लगाने की मानसिकता व्याप्त हो जाएगी, वह समाज अपनी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण इकाई परिवार की रक्षा नहीं कर सकता। एकल परिवारों के चलन ने परिवार में हिंसा को जन्म दिया है। अकेले रहते हुए पति और पत्नी पर किसी का नियन्त्रण नहीं रहता और फलस्वरूप उन्हें समझाने वाला कोई नहीं रहता। उलटे उन्हें मतिभ्रम करने वाले उन्हें घेरे रहते हैं ताकि वे कभी तालमेल नहीं बिठा सकें। उनको मनोवैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित करने वाला कोई नहीं रहता। जीवन का अनुभव समेटे हुए बुजुर्ग वृद्धाश्रम में रहते हैं

और उनकी नालायक औलादें फांसी लगाकर आत्महत्या कर लेती हैं। इसका प्रमुख कारण यही होता है कि वे खुद को इतनी बुरी तरह अवसाद ग्रस्त कर लेते हैं कि उस पीड़ादायक विषाद से मुक्ति का एकमात्र रास्ता उन्हें आत्मघात से होकर जाता हुआ दिखता है।

समाज केवल भौतिक प्रगति से जीवित नहीं रह सकता है। केवल ऐशो-आराम से जीवन में संतुष्टि और खुशियां नहीं हासिल हो सकती हैं। दौलत या पैसा साधन है साध्य नहीं। साध्य तो जीवन-मूल्य हैं जो जीवन को सार्थक करते हुए शान्ति और समृद्धि के वाहक बनते हैं। एक महर्षि घास की झोपड़ी में जिस स्वर्ग की अनुभूति करता है वह महलों में रहने वाले चिन्ता ग्रस्त राजाओं को कभी स्वप्न में भी नहीं हासिल हो सकती। अयोध्या राजपरिवार का विखंडन, महाभारत में राजपरिवार का विनाश और यदुवंशियों का कृष्ण की आंखों के सामने ही विनष्टि इसी तथ्य को दिखलाते हैं कि जब दौलत का नशा सिर पर चढ़ता है तो एकाधिकार वादी प्रवृत्ति जन्म लेती है और व्यक्ति सामाजिक जीवन मूल्यों से विमुख होकर अनैतिक कृत्यों को करते हुए महा विनाश को आमन्त्रित करने के साथ खुद तथा परिवार, समाज और देश के लिए विनाशक हो सकता है।

इंद्रा देवी

शोधार्थी (हिंदी-विभाग)

अनमोल विचार

"यह मत भूलो कि बुरे विचार और बुरे कार्य तुम्हें पतन की ओर ले जाते हैं। इसी तरह अच्छे कर्म व अच्छे विचार लाखों देवदूतों की तरह अनंतकाल तक तुम्हारी रक्षा के लिए तत्पर हैं।"

– स्वामी विवेकानंद जी

विद्यार्थी या मजदूर

विद्यार्थी हैं या हैं मजदूर...!!
उम्मीदों की टोकरी और माँ बाप के अरमान
राष्ट्र के इनमें बसते प्राण,
ऊपर से कंधों पर बस्ते का बोझ
एक पहचान बनाने को,
उज्ज्वल राष्ट्र बनाने को
बोझ लिये बस चलते हैं...
विद्यार्थी हैं या हैं मजदूर...!!

जीवन भर का यही है मसला
कलम दवात या कन्नी तसला,
कमर तोड़ बस मेहनत करते
उम्मीदों पर जीते-मरते,
मान प्रतिष्ठा पाने को
रोटी कपड़ा जुटाने को,
बोझ लिये बस चलते हैं...
विद्यार्थी हैं या हैं मजदूर...!!

मजबूर हैं हम कोई मजदूर नहीं
विद्यार्थी हैं धूल नहीं,
कि जी जब चाहा फटकार दिया
अंकों के आधार पर झाड़ दिया,
हममें है कौशल
हैं...समाज के हम आधार,
विकसित राष्ट्र बनाने को
ये बस चलते रहते हैं...
विद्यार्थी हो या हो मजदूर...!!

आयुष गुप्ता
एकीकृत बी. ए . बीएड
शैक्षिक विभाग

बेटी

बेटी जो है, घर की लौ है।

तम में रहकर उजाला करती

सब कुछ सहकर रिश्ते संभालती।

माँ-बाप की प्यारी है।

सिर पर सारे घर की जिम्मेदारी है।

फिर भी लोग कहते हैं...

कि बेटी होना आसान है।

दो घरों की रानी है,

फिर भी....

कोई न सुनता उसके मन की कहानी है।

बेटी लक्ष्मी, दुर्गा व भवानी है।

फिर भी हर युग में...

साथ उसके होती अनुचित कहानी है।

है समझना कठिन बेटियों को,

जो अपने सपनों को त्यागती,

कभी न अपने दायित्वों से भागती,

समाज में सम्मान पाना है चाहती।

बेटियों की बस इतनी सी कहानी है।

परिवार पालने में कटती जवानी है।

शिल्पा शर्मा
स्नातकोत्तर प्रथम सत्र
(हिंदी-विभाग)

माँ क्या है ?

माँ रोते हुए बच्चों का
खुशनुमा पालना है।
माँ मरुस्थल में नदी का
मीठा सा झरना है।
माँ आँखों का
सिसकता हुआ किनारा है।
माँ गालों पर पप्पी है,
ममता की धारा है।
माँ त्याग हैं, तपस्या है
बच्चों की सेवा है।
माँ की ममता सबसे न्यारी है।
माँ कलम है, दवात है, स्याही है।
माँ परमात्मा की स्वयं एक गवाही है।
माँ चूल्हा, धुआं, रोटी और
हाथों का छाला है।
माँ जीवन की कड़वाहट में
अमृत का प्याला है।
माँ पृथ्वी है,
जगह है, धुरी है।
माँ बिना सृष्टि की
कल्पना अधूरी है।
माँ संवेदना हैं, भगवान है, अहसास है।
माँ जीवन के फूलों में, खुशबू का वास है।
माँ लोरी है, गीत है,
प्यारी सी थाप है।
माँ पूजा की थाली है,
मंत्रों का जाप है।
माँ झुलसते दिनों में,
कोयल की बोली है।
माँ मेहन्दी का कुमकुम है,
सिंदूर है, रोली है।
माँ अनुष्ठान हैं, साधना है,
जीवन का हवन है।
माँ जिन्दगी के मोहल्ले में,
आत्मा का भवन है।
माँ चूड़ी वाले हाथों के,
मजबूत कंधों का नाम है।
माँ कटरा, काशी
और चारों धाम है।
मैं संसार की सभी माताओं को
कोटि-कोटि प्रणाम करता हूँ।
मैं कविता की ये पंक्तियाँ...
अपनी माँ के नाम करता हूँ।

आदर्श नायक
बी.ए. बीएड
शैक्षिक विभाग

शिक्षक

समझ नहीं आता कहाँ से करूँ शुरू-

अध्यापक, शिक्षक या गुरु।

काले बोर्ड पर सफेद चाक है

इधर हमारी काली किस्मत को सफेद करने में

उन्हीं का हाथ है।

वो दिल से नेक है।

क्या गोरा क्या काला ?

क्या अमीर ज्यादा, क्या गरीब थोड़ा ?

वो सबको एक जैसा ज्ञान बाँटते हैं

अंधकार की मृत्यु को रोशनी का ज्ञान बाँटते हैं।

वो करते हैं विद्या की देवी से हमें रू-ब-रू

समझ नहीं आता कहाँ से करूँ शुरू

अध्यापक, शिक्षक या गुरु।

पूछो न कौन-कौन

कभी चाणक्य तो कभी द्रोण

बचपन से सुनी है कहानियाँ

गुरुओं के उन कानों से

यह द्रोण की ही शिक्षा थी,

जो एक भी निशाना न चूका अर्जुन के बाणों से।

चाणक्य जी ने बताया कि-

गुरुओं का अपमान जो करता है,

वो बिन बुलायी मौत मरता है।

अच्छे शिक्षा से ही भारत बना जगदगुरु

समझ नहीं आता कहाँ से करूँ

अध्यापक, शिक्षक या गुरु।

बिन गुरु नहीं होता जीवन साकार,

सिर पर होता जब गुरु का हाथ।

तभी बनता जीवन का सही आकार

गुरु ही है सफल जीवन का आधार।

शिक्षा से बड़ा कोई वरदान नहीं है,

गुरुओं का आशीर्वाद मिले,

इससे बड़ा कोई सम्मान नहीं है।

समझ नहीं आता कहाँ से करूं शुरू

अध्यापक, शिक्षक या गुरु

अध्यापक शिक्षक या गुरु।

ललित कुमार

प्रथम सत्र स्नातकोत्तर

(हिंदी-विभाग)

ग़ज़ल

किस पल तेरा नाम लवों पे ना लूँ समझ नहीं आता।
क्यूं तेरा खुमार हर पहर हर सू समझ नहीं आता।

ज़िन्दगी छोटी सी है मगर सपने बड़े है हमारे,
क्या पाऊं और क्या-क्या खो दूँ समझ नहीं आता।

बस पन्नों से कह पाता हूँ हाल-ए-दिल अपना,
कैसे होती है मेहबूब से गुफ़्तगू समझ नहीं आता।

अगर खौफ न हो तो सोचने की भी ज़रूरत नहीं,
अब कैसे करुँ इस डर पर काबू समझ नहीं आता।

तेरे चेहरे की खूबसूरती किस तरह से बयां करुँ,
तस्वीर बनाऊं या नज्म लिखूँ समझ नहीं आता।

डालेश शर्मा
शोधार्थी (हिंदी-विभाग)

दुःख बुरा नहीं होता

जब मति भ्रष्ट हो जाती है

तब सब कुछ नष्ट हो जाता है...

और जब सब कुछ नष्ट हो जाता है

तो सोचने की क्षमता अस्पष्ट हो जाती है..

और जब सोच अस्पष्ट हो जाती है

तो जीवन में कष्ट ही कष्ट हो जाता है...

और जब कष्ट आ जाता है

तब इंसान को सब स्पष्ट दिखने लगता है...

इसलिए दुःख बुरा नहीं होता

बल्कि दुःख हमें हमारी गलतियां बताता है

और हमें सच्चाई से अवगत कराता है...

कि हम क्यों गलत थे ?

और हम कहाँ गलत थे ?

डालेश शर्मा
शोधार्थी (हिंदी-विभाग)

समाधान व समस्या का किस्सा

इस क्षणभंगुर जमाने से ,
होश आते ही हर कदम पर मिली समस्या
बढ़ती समझ के साथ सवाल आया,
यही तो है जीवन हिस्सा।
जब मंजिल के राहो पर चलते स्मरण हुआ कि
हर राह में कांटे पडे है,
तो आत्म ने प्रश्न किया,
क्या यही होगा जीवन का किस्सा?
हाँ देखा मैंने - राष्ट्र में,
गरीबी की जकड़न, न्याय की होड,
बेरोजगारी का जाल,
इनसे ही तो निकलने को चाहिए,
कुछ समाधान का हाल।
हर गली के कोने में भूख दिखती,
हर मजदूर के आँखों में है
दो वक्त की रोटी पा लेने की प्यास,
गरीबों को है गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की आस।
सरकारी रोजगार की खोज में
भटकते युवा लाखों-लाख ,
आँखों में बड़े-बड़े सपने तो है,
पर हाथों में मेहनत के सिवा है
केवल राख ही राख ।
सबसे बड़ा सवाल है,
क्या संघर्ष का कोई मोल नहीं
या मेहनत करने वालों का बोल नहीं।
नारी, इंसानियत का सम्मान,
बस कहने की बात,
घर और बाहर दोनों जगह,
सुरक्षा पर प्रहार,
हर गली में खड़ी है,
असुरक्षा की दीवार।
इस आधुनिकता की दौड़ में,
रिश्तों का हो रहा है हास्य,
परिवार की बातें,
अब होती हैं मोबाइल के पास।
सबसे बड़ा सवाल है,
क्या संघर्ष का कोई मोल नहीं ?
या मेहनत करने वालों का बोल नहीं।
इन मुद्दों की है पुकार ,
सुन लो ऐ राष्ट्र के कर्णधार,
इन समस्याओं में छिपी
जनता की आह पुकार ।
यह जीवन है संघर्ष का ,
तो समाधान है क्या पास?

रोशनी
(बी.ए. बीएड)
सातवाँ सत्र

कठपुतली

कभी गौर से देखा है कठपुतली को
वह नाचती है क्या?
या छटपटाती है
बन्धन की पीड़ा में
वह करती है अथक प्रयास
खुद को
मुक्त करने का,
पर आखिरकार है तो कठपुतली।

उसके नसीब में कहां छूटना...
वह लड़ती है
हर एक धागे की जकड़न से
और बचना चाहती है-
उन नजरों से
जो उसे लाचार
देख मुस्कराते हैं
पर वो
कहां कुछ कर सकती है ?
स्वेच्छा से
उसे तो चलना है
अनवरत किसी दूसरे
के इशारे से
आखिरकार वो है तो
कठपुतली ही ....

शिवम
शोधार्थी (हिंदी-विभाग)

प्रकृति

मैंने जब भी तुम्हें देखा
पाया आत्मविश्वास।
जब भी तुम्हें सुना
पाया उत्साह का नव संगीत।
तुमसे मिला
तो पाया ख़ुद को खुद से
और बेहतर
तुम में खो कर
पाई निज अभिव्यक्ति
एक अप्रतिम ऊर्जा और
स्वच्छंद प्रेम।
क्योंकि तुम
प्रकृति हो,
वनदेवी हो
सात्विकता का
अक्षय भण्डार हो,
जिससे सिर्फ लिया
जा सकता है कुछ
बेहतर....और बेहतर
जो मनुष्य में
नहीं रहा ..... !

शिवम
शोधार्थी (हिंदी-विभाग)

क्या... जल !

मुझे नहीं पता कि

कैसे करते इसका संरक्षण ?

पर इतना पता है,

जब दुनिया भर के लोग

प्रेम में लिप्त होंगे...

तो मैं सुबह-सुबह करता रहूंगा

घास पर पड़ी ओस की बूंदों को एकत्रित !

और...

जब दुनिया भर के आशिक

प्रेमिका की याद में बहा रहे होंगे आँसू

तब मैं बनूँगा कठोर, जिससे

आँखों का जलस्तर बना रहे !

क्योंकि...

जल वह निमित्त है,

जिससे जिंदगी उपजाऊ बनी रहती है।

वैष्णवी त्रिपाठी

शोधार्थी (हिंदी विभाग)

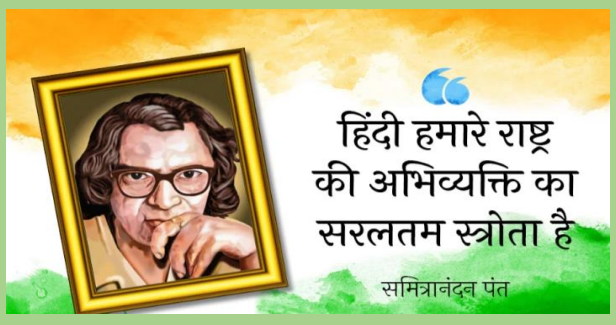

एक उम्र और शाम

शाम को बैठ

घंटों निहारता रहा आसमान और पेड़ों को,

सूरज डूब रहा है;

पत्ते सूखे हुए उड़ रहे,

प्रतीत ऐसा हो रहा कि

मैं भी डूब रहा

और

मैं भी सूख रहा,

ये मेरी झुकी पीठ,लंबी नाक

पसंद नहीं मुझे!

ये मेरी चुप्पी, सुनसान मन

पसंद नहीं मुझे!

उन खाली बंद कमरों में

बीते समय के

अतीत रूपी चश्मे के

शीशे से देखने पर दिखता,

ये पपड़ीयुक्त झुर्रियों से

बना मेरा चेहरा....

ये मह, ये शीशा

एक-दूसरे के दुश्मन लगते हैं

ऐसी दुश्मनी पसंद नहीं मुझे!

घर का

ये बरामदा,ये कमरा

हज़ारों पपड़ीयुक्त झुर्रियों के झरने से

बने लगते है और

ऐसे पपड़ीयुक्त घर भी

पसंद नहीं मुझे!

वैष्णवी त्रिपाठी

शोधार्थी (हिंदी विभाग)

प्रतीक्षा

मैं कर रही हूँ प्रतीक्षा तेरी |

तू क्यों नहीं आ रही मेरी |

में बैठी-बैठी उदास हो रही हूँ|

तेरी यादों में निरन्तर खोई है।

तू क्यों नहीं आ रही मेरी |

सुबह से, अब शाम हो चली है।

तेरे आने की घड़ी हो चली है |

मेरी यादों के काफिले आ रहे हैं |

पर तेरा कहीं भी पता नहीं है।

क्या इतनी बड़ी हुई मुझसे खता कोई

मेरी आँखें राह देख रही है तेरी

तू क्यों नहीं आ रही मेरी?

मेरे नयन अब थक चुके हैं।

अब ये मुझसे कुछ कह रहे हैं |

पर मैं इनको नजर अंदाज़ कर रही हूँ।

इनकी बातों को अनसुनी कर रही हूँ। बस!

मुझे अब भी आस है बाकी आने की तेरी |

तू क्यों नहीं आती मेरी |

राह में बैठी मैं उदास हूँ।

तुझसे दूर होकर भी तेरे पास हूँ।

ढलते सूरज से ही पूछ रही ख़बर हूँ तेरी |

तू क्यों नहीं आ रही मेरी।

मेरे आंसू आँखों के

बाँध तोड़ रहे हैं।

वे आँखों से निकलकर

धरती की ओर दौड़ रहे हैं।

मैं दौडकर

आँगन तक आती हूँ।

लेकिन हर बार

मैं खाली हाथ लौट आती हूँ।

तेरी आहट भी अब तक

आ नहीं रही।

धरती की नर्म ठंडी रेत पर

मैं अपनी गर्दन रख रही हूँ।

मैं तेरे आने का

रास्ता देख रही हूँ।

अभी भी आने की

आस है मुझे... माँ मेरी।

तू क्यों नहीं आ

जाती माँ मेरी।

ध्रुब शर्मा

शोधार्थी (हिंदी विभाग)

इन्तजार

मैंने इन्तजार किया

ठीक उसी तरह जैसे

धरती ने आसमान का

आसमान ने बादल का

बादल ने बारिश का

बारिश ने हवा का

हवा ने पतझड़ का

और पतझड़ ने वसंत का

क्या तुम भी करोगे .....?

शिवम

शोधार्थी (हिंदी विभाग)

बुद्धदेव

सिमट विश्व-वेदना निखिल बज उठी करुण अन्तर में, देव!

हुंकरित हुआ कठिन युगधर्म तुम्हारे स्वर में।

काँटों पर कलियों, गौरिक पर किया मुकुट का त्याग,

किस सुलग्न में जगा प्रभो! यौवन का तीव्र विराग?

चले ममता का बन्धन तोड़

विश्व की महामुक्ति की ओर।

तप की आग, त्याग की ज्वाला से प्रबोध-सन्धान किया,

विष पी स्वयं, अमृत जीवन का तृषित विश्व को दान किया।

वैशाली की धूल चरण चूमने ललक ललचाती है,

स्मृति-पूजन में तप-कानन की लता पुष्प बरसाती है।

वट के नीचे खड़ी खोजती लिये सुजाता खीर तुम्हें,

बोधिवृक्ष-तल बुला रहे कलरव में कोकिल-कीर तुम्हें।

शस्त्र-भार से विकल खोजती रह-रह धरा अधीर तुम्हें,

प्रभो! पुकार रही व्याकुल मानवता की जंजीर तुम्हें।

आह ! सभ्यता के प्रांगण में आज गरल-वर्षण कैसा !

घृणा सिखा निर्वाण दिलाने वाला यह दर्शन कैसा !

स्मृतियों का अँधेर ! शास्त्र का दम्भ ! तर्क का छल कैसा !

दीन-दुखी असहाय जनों पर अत्याचार प्रबल कैसा !

आज दीनता को प्रभु की पूजा का भी अधिकार नहीं,
देव! बना था क्या दुखियों के लिए निठुर संसार नहीं?
धन-पिशाच की विजय, धर्म की पावन ज्योति अदृश्य हुई,
दौड़ो बोधिसत्त्व ! भारत में मानवता अस्पृश्य हुई।
धूप-दीप, आरती, कुसुम ले भक्त प्रेम-वश आते हैं,
मन्दिर का पट बन्द देख 'जय' कह निराश फिर जाते हैं।
शबरी के जूठे बेरों से आज राम को प्रेम नहीं,
मेवा छोड़ शाक खाने का याद नाथ को नेम नहीं।
पर, गुलाब जल में गरीब के अश्रु राम क्या पाएँगे?
बिना नहाये इस जल में क्या नारायण कहलाएँगे?
मनुज-मेघ के पोषक दानव आज निपट निर्द्वन्द्व हुए;
कैसे बचें दीन? प्रभु भी धनियों के गृह में बन्द हुए।
अनाचार की तीव्र आँच में अपमानित अकुलाते हैं,
जागो बोधिसत्त्व ! भारत के हरिजन तुम्हें बुलाते हैं।
जागो विप्लव के वाक् ! दम्भियों के इन अत्याचारों से,
जागो, हे जागो, तप-निधान! दलितों के हाहाकारों से।
जागो, गाँधी पर किये गये मानव-पशुओं के वारों से',
जागो, मैत्री-निर्घोष ! आज व्यापक युगधर्म-पुकारों से।
जागो, गौतम! जागो, महान ! जागो, अतीत के क्रान्ति-गान !
जागो, जगती के धर्म-तत्त्व ! जागो, हे जागो! बोधिसत्त्व !

रामधारी सिंह दिनकर (जन्म 23 सितंबर 1908)